CHETANA
International Journal of Education

Impact Factor
SJIF=5.689

Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN-Print-2231-3613
Online-2455-8729

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

Received on 10th Nov. 2020, Revised on 18th Nov. 2020, Accepted 20th Nov. 2020

आलेख

स्वामी विवेकानन्द तथा टैगोर के शिक्षा संबधी विचार

* शशि पैंसिया, *शोधार्थी (शिक्षा)*
सिंघानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बड़ी झुन्झुनू, राजस्थान
Email : shashijakhra@gmail.com, Mob.- 9214427288, 8949295267

मुख्य शब्द : विवेकानन्द, रविन्द्रनाथ टैगोर, शैक्षिक दर्शन आदि.

सार–संक्षेप

हमारे देश का गौरव बढ़ाने में बहुत से महापुरूषों ने सहयोग किया है। जिसके कारण ही भारत को विश्वगुरू की संज्ञा दी जाती है। इन महापुरूषों के विचार सुनकर ही हमें जीवन में मार्गदर्शन प्राप्त होता है और हम सही मार्ग पर चलने लगते हैं। यह विचार हमारे लिये एक प्रकाश स्तम्भ का कार्य करते हैं। जो सम्पूर्ण विश्व में भारत की कीर्ति को स्थापित करते हैं। इन्हीं महापुरूषों में से मुख्य है– रविन्द्रनाथ टैगोर एवं स्वामी विवेकानन्द। जिन्होंने अपनी तेजस्वी वाणी से, विचारों से शिक्षा–जगत में एक नवीन क्रान्ति लाने में सक्षम हुए।

प्रस्तावना

आज हमारे देश भारत सहित समस्त विश्व में बढ़ती अराजकता, हिंसा, मनो–उन्माद, आतंकवाद, नशाखोरी तथा पर्यावरण क्षरण आदि समस्याओं के कारण समस्त मानव–जाति को अपनी सभ्यता और संस्कृति के समक्ष अस्तित्व का संकट दिखाई दे रहा है। वास्तव में ऑखें बन्द रखे हुए मानव ने अपने सांस्कृतिक मूल्यों की अवहेलना करते हुए पश्चिमीकरण के रास्ते जो विकास की यात्रा तय की है, उसके कारण आज हमें अपनी सभ्यता और संस्कृति के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता प्रतीत हो रही है। विकास की इस यात्रा में मनुष्य प्रजाति ने शिक्षा–प्रणाली के मानवीय आधारभूत मूल्यों की अनदेखी की।

इसलिए विवेकानन्द व टैगोर जी के शैक्षणिक–दर्शन में आध्यात्मिक व भौतिक विकास पर बल देते हुए मानव के व्यक्तित्व निर्माण को प्राथमिकता दी गई है। जिनका अनुसरण कर वर्तमान समाज की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक दर्शन

शिक्षा मनुष्य को मानव बनाने की प्रक्रिया है या यह कहा जाये कि मनुष्य को मानव बनाने का दायित्व शिक्षा पर है। शिक्षा की व्यवस्थागत प्रक्रिया से निकलकर ही बालक एक वयस्क के रूप में समाज में अपना स्थान और स्तर निर्धारित करता है। व्यक्तित्व और समाज की आवश्यकता के अनुसार बालक को शिक्षित और सभ्य बनाने का अहम कार्य शिक्षा व्यवस्था से ही अपेक्षित होता है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि 'जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सके, मनुष्य बन सके, चरित्र गठन कर सके और विचारो का सामंजस्य कर सके वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है'। मानव निर्माण को शिक्षा का मूल उद्देश्य मानने वाले स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन परम्परागत और आधुनिक शिक्षा प्रणाली का अद्भुत समन्वय है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

सार्वभौमिक शिक्षा प्रदान करने के समर्थक स्वामी विवेकान्द शिक्षा में किसी भी प्रकार के भेदभाव के विरुद्ध थे। वे इस सत्य को भली–भांति जानते थे कि यदि शिक्षा ग्रहण करने का अवसर अगर कुछ लोगों तक ही सीमित हो या किसी भी कारण से समाज का बड़ा हिस्सा शिक्षा की प्राप्ति से वंचित रह गया तो देश का सम्पूर्ण विकास नहीं हो पायेगा। उनके विचार में शिक्षा का प्रसार देश के कारखानों, खेल के मैदानों और खेतों, यहाँ तक कि देश में हर घर में होना चाहिए। यदि बच्चे स्कूल तक नहीं आ पा रहे हैं तो शिक्षकों को उन तक पहुँचना चाहिए।

विवेकानंद जी के अनुसार शिक्षा समाज के निर्धनतम व्यक्ति को भी प्राप्त होनी चाहिए। स्वामी विवेकानंद ने आम जनता के जीवन की परिस्थितियाँ सुधारने के लिए शिक्षा का समर्थन किया। उनके अनुसार आम जनता को प्राप्त होने वाली इस सार्वभौमिक शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तिगत प्रगति के साथ सामाजिक विकास को सुनिश्चित करना है।

स्वामी विवेकानंद ने महिला शिक्षा पर विशेष बल दिया। समाज में कई अवसरों पर स्वामी विवेकानंद ने विचार प्रकट करते हुए कहा कि जब तक महिलाओं को अपने देश में यथोचित सम्मान प्राप्त नहीं हो जाता भारत प्रगति नहीं कर सकता। उनके अनुसार महिलाओं को सुशील, चरित्रवान, निडर और शक्तिशाली व्यक्तित्व के रूप में विकसित करना शिक्षा का उद्देश्य है। उनके विचार में महिला न केवल पुरुष के समान योग्य है बल्कि वह घर–परिवार में भी बराबर की भागीदारी रखती है उसे किसी दृष्टि से पुरुष से हीन नहीं कहा जा सकता। उन्होंने महिला शिक्षा और महिला–पुरुष समानता पर भी बल दिया।

स्वामी विवेकानंद ने मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाने वाली प्रणाली के महत्व को स्वीकार किया। भौतिकता और पश्चिमी अंधानुकरण के कारण मातृभाषा की अवहेलना कर अंग्रेजी को बालमन पर थोपा जाता है। मातृभाषा का घर–परिवार और समाज में अधिकतम प्रयोग किया जाता है ऐसे में स्वाभाविक है कि किसी विदेशी भाषा को रटने की बजाय मातृभाषा के माध्यम से ही बालक दीर्घकालीन और अधिकतम ज्ञान प्राप्त कर सकता है। बालक मातृभाषा के माध्यम से ही रचनात्मक और कलात्मक विचारों का प्रसार समाज में कर सकता है।

रचनात्मकता विरोधी, संस्कार विरोधी तथा अव्यवहारिक मैकालेवादी शिक्षा व्यवस्था से स्वामी विवेकानंद बेहद असंतुष्ट थे क्योंकि उनकी दृष्टि में यह शिक्षा भारत के नागरिकों के लिए व्यावहारिक और उपयोगी नहीं थी। अंग्रेजी शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य भारत अथवा भारतीयों का हित करना नहीं बल्कि भारत पर अंग्रेजों के शासन को स्थायी रखने के लिए भारतीयों में से ही क्लर्क खोजना था। उनके विचार में मैकालेवादी शिक्षा व्यवस्था व्यक्ति को आत्म–निर्भर न बनाकर दूसरे पर निर्भर बनाती है और उसके आत्मविश्वास को समाप्त कर देती है। इससे भी बढ़कर अंग्रेजी शिक्षा का मूल्य–विरोधी स्वरूप, व्यक्ति के धार्मिक और आध्यात्मिक विश्वासों को समाप्त कर उसे एक नकारात्मक व्यक्तित्व के रूप में परिणत कर देता है। इसलिए विवेकानंद जी अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली में भारतीय दृष्टिकोण और सामाजिक आदर्शों के अनुसार आमूल–चूल परिवर्तन के इच्छुक थे।

नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों से विहीन शिक्षा प्रणाली किसी भी समाज को अवनति की ओर ले जा सकती है। स्वामी विवेकानंद ने इसलिए अनिवार्य रूप से शिक्षा में गीता, उपनिषद और वेद में निहित नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के समावेश की आवश्यकता पर बल दिया। उनके लिए धर्म, कर्मकांड अथवा धार्मिक रीति –रिवाज नहीं बल्कि समस्त मानव जाति के लिए आत्मज्ञान तथा आत्मबोध का कारक है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार वास्तविक धर्म किसी समाज, जाति, नस्ल, वंश, स्थान और समय तक सीमित नहीं है बल्कि उसका लक्ष्य सामाजिक कल्याण है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार नैतिकता और धर्म एक ही हैं और इन मूल्यों से ओतप्रोत शिक्षा विद्यार्थियों का सर्वांगींण विकास करने में सहायक है।

मन और शरीर दोनों को विकसित करने के लिए स्वस्थ रहना आवश्यक है। स्वामी विवेकानंद का विचार था कि बिना स्वस्थ शरीर के आत्म बोध या चरित्र निर्माण संभव नहीं है। इसलिए स्वामी विवेकानंद ने पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा को विशेष रूप से शामिल करने पर बल दिया। उन्होंने युवा वर्ग से आह्वान किया कि वे गीता पाठ करने की अपेक्षा फुटबॉल खेलने से स्वर्ग के अधिक नजदीक पहुंचेंगे। उन्होंने कहा कि बलवान शरीर और मजबूत पुट्ठों से युवा वर्ग गीता को भी बेहतर ढंग से समझ सकेगा। मनुष्य का वास्तविक और सर्वांगीण विकास तभी माना जाएगा जब वह मन और तन दोनों से न केवल स्वस्थ हो, बल्कि समाज में सकारात्मक योगदान भी करे।

स्वामी विवेकानंद के शिक्षा सम्बन्धी विचारों में प्राचीन भारतीय मूल्यों, आदर्शों और आधुनिक पश्चिमी मान्यताओं का समावेश है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति और व्यक्तित्व निर्माण है। व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए स्वामी विवेकानंद ने शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक और व्यावसायिक विकास के साथ भेदभाव रहित शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच का समर्थन किया। उन्होंने व्यावहारिक और आधुनिक दृष्टिकोण अपनाते हुए उन्होंने प्रौद्योगिकी, वाणिज्य, उद्योग और विज्ञान से जुड़ी पश्चिमी शिक्षा को भी महत्व दिया।

इस प्रकार स्वामी विवेकानंद के शैक्षणिक दर्शन में आध्यात्मिक और भौतिक विकास पर बल देते हुए मानव के व्यक्तित्व निर्माण को प्राथमिकता दी गई है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन अत्यंत प्रासंगिक है जिसका अनुसरण कर वर्तमान समाज की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर का शैक्षिक दर्शन

अनेक विद्वान रवीन्द्रनाथ टैगोर को एक क्रांतिकारी शिक्षाशास्त्री के रूप में देखते हैं। उनका शिक्षा दर्शन और शिक्षा विधि इतना अर्थपूर्ण और उपयोगी है कि उन्हें अलग से भी देखा जाये तो उनका महत्व कम नहीं होता है।

शिक्षा संबंधी गुरुदेव के मूल विचार उनके प्रसिद्ध लेख 'तपोवन' (1909) में देखे जा सकते हैं। उनके शिक्षा दर्शन का निर्माण मूलतरू भारतीय दार्शनिक परम्परा विशेषतरू उपनिषदों द्वारा हुआ था। गुरूदेव पर प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति का गहरा प्रभाव था। उनके विचारों की झलक 'तपोवन', 'तपस्या', 'आश्रम', 'संगम', 'ब्रह्मचर्य' जैसे महत्वपूर्ण शब्दों के प्रयोग में मिलती है। इस दृष्टि से रवीन्द्रनाथ टैगोर निश्चित रूप से आदर्शवादी शिक्षाशास्त्री कहे जा सकते हैं। उनका मानना था कि ईश्वर ने अपनी योजना के तहत ही बच्चे को नैसर्गिक प्रतिभा प्रदान कर धरती पर भेजा है। टैगोर बालकों में उदात्त भावनाओं को जागृत कर उन्हें आध्यात्मिक भूमि पर लाना चाहते थे।

टैगोर को कुछ विद्वान प्रकृतिवादी शिक्षाशास्त्री मानते हैं पर टैगोर का प्रकृतिवाद पश्चिम के प्रकृतिवाद से बिल्कुल भिन्न है। गुरूदेव के शैक्षिक सिद्धान्त का सार मनुष्य और प्रकृति के बीच अध्यात्मिक एकता है। टैगोर की दृष्टि में बच्चों का विकास नैसर्गिक रूप से प्रकृति की गोद में होना चाहिए। टैगोर पर रूसो एवं अंग्रेजी रूमानी कवियों, जैसे शेली और वर्ड्सवर्थ का प्रभाव देखा जा सकता है। वे कहा करते थे कि "शिक्षा फैक्टरी में काम करने की दक्षता हासिल करने के लिए नहीं है, और न ही विद्यालयों और महाविद्यालयों में परीक्षा में पास करने के लिए है। सच्ची शिक्षा तपोवन में प्रकृति के साथ एकरूप हो तपस्या के माध्यम से शुद्ध होकर ही प्राप्त की जा सकती है।"

➢बच्चे की स्वतंत्रता

गुरूदेव के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का जन्म किसी न किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिए होता है। प्रत्येक बालक अपनी लक्ष्य–प्राप्ति की दिशा में बढ़ सके, इसके लिए उसे योग्य बनाना शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्य है। उन्होंने अपनी दो कविताओं 'पॉवर ऑफ अफेक्शन' तथा 'बंगमाता' में इस तथ्य को स्पष्ट किया है कि हर बच्चे का अपना व्यक्तिव होता है, जिसके विकास को किसी भी संस्था द्वारा बाधित नहीं किया जाना चाहिए। यह आधुनिक शिक्षा सिद्धान्त को दर्शाता है। माँ को बच्चे को अपने गर्भ के कैद से मुक्त करने के उपरांत अपने स्नेह के कारागार में बंद न कर स्वतंत्र रूप से विकसित होने का अवसर देना चाहिए। उनकी दृष्टि में हर बच्चा स्वंय का, वसुधा का तथा सार्वभौम सत्ता (ईश्वर) का है। हर व्यक्ति को मानव होने का अधिकतम लाभ उठाना चाहिए।

गुरूदेव टैगोर के अनुसार शिक्षा केवल वही नहीं है जो विद्यालय में दी जाती है– न ही कुछ इस तरह की चीज है जिसे प्रत्येक सप्ताह कुछ ही घंटो में दे दी जा सकती है। शिक्षा को व्यक्तित्व के अन्य पक्षों से अलग वस्तु मानना गलत है।

➢भारतीय शैक्षिक परम्परा के पक्षधर

अपने व्यक्तिगत अनुभव से रवीन्द्रनाथ ने अनुभव किया कि पश्चिमी/अंग्रेजी शिक्षा का उद्देश्य औपनिवेशिक शासन हेतु क्लर्क तैयार करना था और जहाँ तक संभव हो तथाकथित शिक्षित भारतीयों में भारतीय संस्कृति और दर्शन के प्रति हीनता की भावना पैदा करना था। गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भारत की गरीबी और पश्चिमी देशों की समृद्धि देखी थी। उन्होंने महसूस किया कि भारत इन देशों से बहुत कुछ सीख सकता है। इसके बावजूद उनकी जड़ें भारतीय संस्कृति और परम्परा में जमी रहीं। शिक्षा और संस्कृति (1935) में उन्होंने लिखा ''जब भारत की संस्कृति अपने सर्वोच्च अवस्था में थी वह कभी धन की कमी के कारण हतोत्साहित या शर्मिन्दा नहीं हुई। इसका कारण यह था कि उस संस्कृति का उद्देश्य आत्मिक जीवन का विकास करना था, भौतिक सम्पदा का संग्रहण नहीं। शिक्षा का उद्देश्य इसी लक्ष्य को प्राप्त करना होना चाहिए।...इसी उद्देश्य को ध्यान में रख कर विभिन्न विषयों का शिक्षण किया जाना चाहिए। मानव का स्तर या सम्मान व्यवहारिकता तथा सामाजिक कल्याण के समन्वय पर निर्भर करता है।''

आधुनिक शिक्षा की मशीनों पर निर्भरता के कविवर विरोधी थे। वे इसे शिक्षा के लिए हानिप्रद मानते थे। उनका कहना था कि जीवित पांव किसी भी वाहन से अधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षा ऐसी हो जो पांव यानि मानव को मजबूत बनाये मशीन को नहीं।

➢अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना

गुरूदेव में अर्न्तराष्ट्रीयता की भावना कुट–कुट कर भरी थी। यूरोप की अच्छाईयों को ग्रहण करने में उन्हें कोई हिचक नहीं थी। वे कहते है 'हमलोग यह कहने के लिए व्यग्र हो जाते है कि हम सबकुछ जानते है।'' जबकि हमें पूरे आत्मविश्वास के साथ कहना चाहिए कि ''हम सब कुछ कर सकते है''। आज यूरोप का यही धर्म बन गया है। उनके आत्मसम्मान की कोई सीमा नहीं है। उन्होंने जल, धरती और आकाश सब पर विजय प्राप्त कर लिया है। दूसरी ओर हमलोग ईश्वर से प्रार्थना भर करते रहे। फलतरू देवताओं ने भी हमे धोखा दिया।' लेकिन वे यूरोपीय सभ्यता के अंधभक्त भी नहीं थे। उनका माना था कि सभी आधुनिक भौतिक साधनों के बावजूद बिना सांस्कृतिक चेतना के मानव जीवन व्यर्थ है।

परम्परागत विद्यालयों मे ईश्वर की योजना एवं बच्चे के व्यक्तित्व की विशेषताओं को ध्यान में रखे बिना वर्कशाप की तरह सभी बच्चों को एक सा बनाने का प्रयास किया जाता है। अगर कहीं से विरोध होता है तो अनुशासन के नाम पर उस आवाज को दबा दी जाती है। कविवर के अनुसार जीवन इस तरह से सीधी रेखा में नहीं चलता। रवीन्द्रनाथ के अनुसार विद्यालय शिक्षा देने की विशेष संस्था है। यह प्रौढ़ों के लिए तो उपयुक्त हो सकता है पर बच्चों के लिए नहीं। बच्चे तपस्वी नहीं हैं जो पाठशाला रूपी मठ में प्रवेश लेकर तत्काल शिक्षा ग्रहण करने लगे।

➢सूचना शिक्षा नहीं

गुरूदेव शिक्षा में सूचनाओं को इकट्ठा करने की प्रवृत्ति के विरोधी थे। उनका कहना था कि ''हमलोग पृथ्वी पर इस दुनिया को स्वीकार करने आये है, केवल जानने के लिए नहीं। हम ज्ञान के द्वारा शक्तिशाली बन सकते है पर सहानुभूति के द्वारा हम सम्पूर्णता को प्राप्त कर सकते है। सर्वोच्च शिक्षा वह है जो हमें केवल सूचनांए ही नहीं देता है वरन् हमारे जीवन को सम्पूर्ण वसुधा से जोड़ता है पर हम पाते है कि वर्तमान शिक्षा सहानुभूति की न केवल लगातार योजनाबद्ध ढंग से उपेक्षा करती है वरन् दबाती भी है। प्रारंभ से ही बच्चे को प्रकृति से अलग कर दिया जाता है। बच्चे से हम उसकी पृथ्वी छीन लेते हैं भूगोल पढ़ाने के लिए, वाणी छीन लेते है व्याकरण पढ़ाने के लिए, उसकी भूख महाकाव्यों की कथाओं की है पर हम उसे ऐतिहासिक तथ्यों की सारणी एवं तिथियां परोसते है। वह मानव जगत में पैदा हुआ पर उसे हम मशीनों की दुनिया में देशनिकाला देते है। बच्चे की प्रकृति इसके विरूद्ध सहने की अपनी पूरी ताकत के साथ विरोध करती है। पर अंत में उसे दण्ड के द्वारा शान्त कर दिया जाता है।'' आज शिक्षालय के स्तर को मापने का आधार विद्यालय भवन की भव्यता, पुस्तकों की संख्या तथा शैक्षिक उपकरणों की उपलब्धता है जबकि रवीन्द्रनाथ ने शिक्षा

के वास्तविक पक्ष पर ध्यान दिया। इन भौतिक सम्पदाओं से लालच एवं स्वार्थ तो फल–फूल सकता है पर सामाजिक मूल्य नहीं, जो कि सही शिक्षा का लक्ष्य है।

उपसंहार

टैगोर एवं विवेकानन्द दोनों ही आधुनिक युग के एक महान दार्शनिक एवं शिक्षा शास्त्री थे। इन्होंने अपने मौलिक एवं नये विचारों के द्वारा भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। अपनी भारतीय संस्कृति के आधार पर इन्होंने ना केवल भारतीय शिक्षा की नींव डाली वरन् पाश्चात्य शिक्षा में भी पूर्व एवं पश्चिम के आदर्शों को नये रूप में स्थापित किया। इनका व्यक्तित्व महान् था, विलक्षण था जिसके बलबुते पर इन्होंने बौद्धिक, कलात्मक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक आदि विभिन्न क्षेत्रों को प्रभावित किया। टैगोर जी ने मानव जीवन के सभी पहलुओं का अध्ययन किया एवं मनुष्य को सर्वोच्च स्थान दिया। वे मनुष्य को ईश्वर का रूप मानते हैं। इन्होंने शिक्षा को परम्परागत स्वरूप को प्राकृतिक वातावरण से जोड़कर बच्चों में शिक्षा के प्रति नवीन दृष्टिकोण से समाज को रूबरू करवाया। इसी तरह विवेकानन्द जी का भी सम्पूर्ण दार्शनिक चिन्तन एवं शिक्षा सम्पूर्ण मानव जाति के लिए है, उनकी शिक्षा सार्वभौमिक तथा उन मानवीय मूल्यों को प्रतिपादित करती है, जिनकी उपादेयता सभी के लिये है। यदि बालक को एक आदर्श नागरिक बनाना है, तो हमें उन्हें अच्छे संस्कार देने होंगे। विचारों में परिवर्तन लाना होगा। स्वामी विवेकानन्द न केवल एक सामाजिक सुधारक थे बल्कि एक शिक्षक भी थे। शैक्षणिक विचारों में उनका योगदान सर्वोच्च महत्व का है। ये शिक्षा को सामाजिक परिर्वतन के सबसे शक्तिशाली साधन के रूप में देखते हैं। विवेकानन्द जी के लिए शिक्षा, मनुष्य की पूर्णता की अभिव्यक्ति है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. टैगोर, रविन्द्रनाथ, मेरी आत्मकथा, देवानगर प्रकाशन, जयपुर–2010
2. टैगारे, रविन्द्रनाथ, समाजिक एवं दार्शनिक इतिहास, पंचशील प्रकाशन, प्रथम संस्करण – 2009
3. स्वामी विवेकानन्द जीवन एवं दर्शन, किताबघर, नई दिल्ली– 1980
4. शिक्षा दर्शन, डॉ. सीताराम जायसवाल, प्रकाश केन्द्र, लखनउ
5. श्री रत्नेश्वर पुस्तक भंडार, के. ई. एम. रोड, बीकानेर
6. भारतीय दर्शन, जाटव, डॉ, डी. आर. 2000
7. ठाकुर, रविन्द्रनाथ मेरा बचपन हिन्दी प्रकाशन समीति शान्ति निकेतन– 1962
8. विवेकानन्द साहित्य प्रथम खण्ड, अद्धैत आश्रम, कोलकाता– 2005

*** Corresponding Author**
शशि पैंसिया, *शोधार्थी (शिक्षा)*
सिंघानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बड़ी झुन्झुनू, राजस्थान
Email : shashijakhra@gmail.com, Mob.- 9214427288, 8949295267